



ए.एफ.आर.

निर्णय आरक्षित दिनांक: 06.02.2026

निर्णय वितरित दिनांक: 10.02.2026

Neutral Citation No. - 2026:AHC:29002

कोर्ट सं.- 38

वाद :- प्रथम अपील सं: - 978 ऑफ 2025

अपीलार्थी:- सुनील कुमार दुलबिश

प्रतिवादी:- श्री रामेश चंद्र दुलबिश (मृत) और 3 अन्य

अपीलार्थी के अधिवक्ता:- दुर्गेश कुमार सिंह, सुधीर कुमार मालवीय

प्रतिवादी के अधिवक्ता:- शिव सागर सिंह

माननीय न्यायमूर्ति संदीप जैन

1. यह प्रथम अपील वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) मेरठ के न्यायालय द्वारा वाद सं. 782 ऑफ 2006 सुनील कुमार दुलबिश बनाम रामेश चंद्र दुलबिश (मृत उनके उत्तराधिकारियों के माध्यम से) और अन्य में पारित विवादित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 30.8.2025 के विरुद्ध दायर की गई है, जिसके द्वारा प्रतिवादी का सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के तहत आवेदन 89-सी स्वीकार कर लिया गया और परिणामस्वरूप, वाद पत्र इस आधार पर खारिज कर दिया गया

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



कि वाद बेनामी लेन-देन (निषेध) अधिनियम, 1988, जिसे आगे 'अधिनियम 1988 कहा गया है, की धारा 4(1) के तहत वर्जित है।'

2. तथ्यात्मक परिदृश्य यह है कि वादी-अपीलार्थी सुनील कुमार दुलबिश ने वाद सं. 782 ऑफ 2006 इस कथन के साथ दायर किया कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 रामेश चंद दुलबिश तथा प्रतिवादी सं. 2 श्रीमती सरला दुलबिश एक ही परिवार से हैं, प्रतिवादी सं. 1 वादी के पिता हैं और प्रतिवादी सं. 2 वादी की माता हैं। यह कथन किया गया कि वादी तथा उपरोक्त प्रतिवादियों के पूर्वज स्वर्गीय शांति सरन दुलबिश कुछ कृषि संपत्ति के मालिक थे, जिसका वर्णन वाद पत्र के पैरा 3 में गांव मवाना कलां, परगना हस्तिनापुर, तहसील मवाना, जिला-मेरठ में स्थित भूमि के रूप में किया गया था, जिसका खसरा संख्या समेकन कार्यवाही में बदल गया था, जो वर्तमान में प्रतिवादी सं. 1 के नाम दर्ज है। यह आगे कथन किया गया कि स्वर्गीय शांति सरन दुलबिश की मृत्यु वर्ष 1953 में हुई, जो वादी के दादा थे, उनके चार पुत्र थे, अर्थात् रामेश चंद दुलबिश (प्रतिवादी सं. 1), सुरेश चंद, नरेश चंद और उमेश चंद।

3. यह वादी द्वारा आगे कथन किया गया कि शांति सरन दुलबिश की मृत्यु के बाद 24.2.1953 को मृतक के चार पुत्रों के बीच पारिवारिक बंटवारा हुआ और संपत्ति को चार हिस्सों में विभाजित किया गया तथा प्रतिवादी सं. 1 पारिवारिक बंटवारे में प्राप्त भूमि का मालिक बन गया। यह वादी द्वारा आगे कथन किया गया कि वह शांति सरन दुलबिश का पौत्र होने के नाते, उपरोक्त संपत्ति के आधे हिस्से का मालिक है और उपरोक्त संपत्ति का शेष आधा हिस्सा प्रतिवादी सं. 1 का है। यह आगे कथन किया गया कि प्रतिवादी सं. 1, वादी के

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



पिता होने के नाते, उपरोक्त संपत्ति के प्रबंधन को देख रहे थे, क्योंकि परिवार एक हिंदू अविभाजित परिवार था।

4. यह वादी द्वारा आगे कथन किया गया कि उसके पिता/प्रतिवादी सं. 1 ने वादी को सूचित किए बिना और उससे कोई अनुमति लिए बिना, उपरोक्त संपत्ति का एक बड़ा हिस्सा विभिन्न व्यक्तियों को इस धारणा पर हस्तांतरित कर दिया कि वह उपरोक्त संपत्ति का एकमात्र मालिक था और संपत्ति के हस्तांतरण के बाद प्राप्त राशि भी प्रतिवादी सं. 1 के पास ही रही, क्योंकि परिवार अविभाजित था।

5. यह आगे कथन किया गया कि साझेदारी फर्म मेसर्स सुनील पैकेजिंग इंडस्ट्रीज की आय से, जिसमें उसके पिता एक निष्क्रिय साझेदार थे, और उसके द्वारा प्राप्त कैश क्रेडिट बैंक सीमा से, वर्ष 1989 और 1990 में कुछ अचल संपत्तियाँ खरीदी गईं, जिनका विवरण वाद पत्र में दिया गया है, उसकी माता, श्रीमती सरला दुलबिश (प्रतिवादी सं. 2) के नाम पर, जिस पर कृषि संपत्ति बेचकर प्राप्त धन से उसके द्वारा एक मकान बनवाया गया था और इस प्रकार, 24.2.2015 को अपनी माता की मृत्यु के बाद, वह इस संपत्ति सं. 342/1 हरनामदास रोड, सिविल लाइंस, मेरठ का एकमात्र मालिक बन गया है।

6. यह आगे कथन किया गया कि उसकी माता, श्रीमती सरला दुलबिश उपरोक्त संपत्ति की केवल एक बेनामी मालिक थीं और उनकी मृत्यु के बाद, उनके कानूनी उत्तराधिकारी 2/1 राजीव कुमार दुलबिश ने विवादित संपत्ति में कोई अधिकार, शीर्षक या हित अर्जित नहीं किया है।

7. यह आगे कथन किया गया कि 4.1.1972 को वादी के पिता ने अपनी संपत्ति हथियाने के लिए एक पारिवारिक समझौता किया/बनाया और उस समय वह बी.एससी. की पढ़ाई कर रहे

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



थे। यह पारिवारिक समझौता कभी लागू नहीं हुआ, जो उसके ज्ञान में नहीं था और उस पर उसके हस्ताक्षर भी नहीं हैं। यह कथन किया गया कि वादी को उपरोक्त कथित पारिवारिक समझौते के बारे में एसडीओ, मवाना, मेरठ के न्यायालय में लंबित मामले की कार्यवाही से पता चला। यह आगे कथन किया गया कि उसके पिता ने विवादित संपत्ति के अधिकारों, शीर्षक और कब्जे में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया, जो उसके हिस्से में आई थी और इसलिए, वादी को 5.11.2001 को एसडीओ, मवाना के न्यायालय में अपने दादा शांति सरन दुलबिष से विरासत में मिली संपत्ति के आधे हिस्से के स्वामित्व की घोषणा के लिए वाद दायर करना पड़ा, जो शांति सरन दुलबिष के चार पुत्रों के बीच हुए पारिवारिक बंटवारे में उसके हिस्से में आया था।

8. यह आगे कथन किया गया कि वादी ने अपने पिता/प्रतिवादी सं. 1 से विभिन्न व्यक्तियों को संपत्ति हस्तांतरित करने से प्राप्त प्रतिफल की राशि का हिसाब देने का अनुरोध किया और लंबे समय तक उनके द्वारा प्रबंधित संपत्ति से प्राप्त आय का हिसाब देने का भी अनुरोध किया, लेकिन उसके पिता ने इनकार कर दिया। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने भी मकान के नीचे की भूमि में उसके आधे हिस्से तक आवासीय मकान के बंटवारे से इनकार कर दिया है। यह कथन किया गया कि भूमि पर भवन निर्माण वादी की एकमात्र संपत्ति थी, जबकि इसके नीचे की भूमि, वादी और प्रतिवादी सं. 1 की संयुक्त संपत्ति थी। यह कथन किया गया कि प्रतिवादी सं. 2 का आवासीय संपत्ति सं. 342/1, हरनामदास रोड, सिविल लाइंस, मेरठ में कोई हिस्सा नहीं है।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

9. यह आगे कथन किया गया कि उसकी माता श्रीमती सरला दुलबिश का विवादित संपत्ति में कोई अधिकार नहीं था, इसलिए वह 15.10.2005 को प्रतिवादी सं. 3 श्रीमती नूपुर दुलबिश के पक्ष में पंजीकृत वसीयत निष्पादित नहीं कर सकती थी। आरोप लगाया गया कि उपरोक्त वसीयत एक जाली दस्तावेज थी, जो वादी पर बाध्यकारी नहीं थी। यह आगे कथन किया गया कि वादी की माता की मृत्यु के बाद, राजीव कुमार दुलबिश को उसके कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में प्रतिस्थापित किया गया, लेकिन उस समय, उपरोक्त वसीयत के अस्तित्व का वादी को कभी खुलासा नहीं किया गया, जो स्वयं साबित करता है कि, कथित वसीयत एक जाली और मनगढ़ंत दस्तावेज थी, जो प्रतिवादी सं. 3 को विवादित संपत्ति के संबंध में कोई अधिकार नहीं देती है।

10. वादी ने निम्नलिखित राहतों का दावा किया है:

(i) न्यायालय के डिक्री द्वारा, वादी को मकान सं. 342/1, हरनामदास रोड, सिविल लाइंस, मेरठ का पूर्ण और एकमात्र मालिक घोषित किया जाए।

(ii) वाद का खर्च भी प्रतिवादियों के विरुद्ध वादी को दिया जाए।

(iii) कोई अन्य राहत जो न्यायालय उचित और समुचित समझे, वह भी प्रतिवादियों के विरुद्ध वादी को दी जाए।

11. प्रतिवादियों ने विचारण न्यायालय में आवेदन 89-सी इस कथन के साथ प्रस्तुत किया कि बंटवारे के बाद, संपत्ति उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भू-राजस्व अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, वादी के पिता रामेश चंद दुलबिश की स्व-अर्जित संपत्ति बन गई। वादी ने कथन किया है कि उसके पिता ने बेईमानी से संपत्ति का एक बड़ा हिस्सा विक्रय विलेख आदि

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

निष्पादित करके कुछ व्यक्तियों को, वादी के ज्ञान और जानकारी के बिना, हस्तांतरित कर दिया, लेकिन ऐसे हस्तांतरण और विक्रय प्रतिफल की प्राप्ति का कोई विवरण वाद पत्र में उल्लेखित नहीं किया गया है। यह आगे कथन किया गया कि वादी का आरोप है कि विवादित संपत्ति उसके व्यवसाय की आय से खरीदी गई थी, जो एक बेनामी संपत्ति थी, इसलिए, वाद बेनामी लेन-देन (निषेध) अधिनियम, 1988 के प्रावधानों द्वारा वर्जित था। यह आगे कथन किया गया कि वादी कथित पारिवारिक समझौते दिनांक 4.1.1972 को 33 वर्ष से अधिक की अवधि के बाद, वर्ष 2006 में, निर्मित और जाली बताते हुए और उस पर बाध्यकारी नहीं होने के आधार पर चुनौती दे रहा था, जिसके बारे में कथित तौर पर वादी को वर्ष 2001 में पता चला था, लेकिन वाद तीन वर्ष की निर्धारित सीमा अवधि के बाद दायर किया गया, जो पूरी तरह से सीमा अवधि से वर्जित था। यह आगे कथन किया गया कि वादी ने अपनी माता/प्रतिवादी सं. 2 को विवादित संपत्ति की बेनामी मालिक होने का आरोप लगाया है, इसलिए वाद अधिनियम 1988 द्वारा वर्जित था। इन कथनों के साथ, यह प्रार्थना की गई कि वादी का वाद पत्र सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11(डी) के तहत खारिज किया जाए।

12. वादी-अपीलार्थी ने प्रतिवादियों के उपरोक्त आवेदन का इस आधार पर विरोध किया कि यह कानूनी रूप से सुस्थापित नहीं था क्योंकि प्रतिवादी पहले ही लिखित कथन दाखिल कर चुके हैं और वादी ने भी अपना साक्ष्य दाखिल कर दिया है और उसकी आंशिक जिरह भी हो चुकी है, इसलिए इस स्तर पर आवेदन प्रस्तुत नहीं किया जा सकता था। यह कथन किया गया कि प्रतिवादी किसी न किसी बहाने वाद के निपटारे में देरी करना चाहते हैं। यह आगे कथन किया गया कि जब शांति सरन दुलबिष की मृत्यु हुई, तब वादी युवा/नाबालिग था और

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

विरासत में मिली संपत्ति पर वादी के पिता रामेश चंद दुलबिश के नाम के मात्र बदलाव का विवादित संपत्ति में वादी के अधिकार, शीर्षक और हित पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि वादी ने यह घोषणा मांगी है कि वह विवादित संपत्ति की भूमि के दो-तिहाई हिस्से का मालिक है और 342/1, हरनामदास रोड, सिविल लाइंस, मेरठ पर बने भवन का एकमात्र मालिक है, जिस पर उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भू-राजस्व अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। यह आगे कथन किया गया कि वादी नाबालिग था और हिंदू अविभाजित परिवार (एचयूएफ) का सदस्य था, वादी के पिता एचयूएफ के कर्ता थे, जो वादी को उसके दादा शांति सरन दुलबिश से विरासत में मिली संपत्ति के पूरे मामलों को देख रहे थे। यह आगे कथन किया गया कि अधिनियम 1988 के प्रावधान लागू नहीं हैं और पारिवारिक समझौता दिनांक 4.1.1972 इस मामले का विषय नहीं था, क्योंकि उस पारिवारिक समझौते के संबंध में एक अलग मामला अपर सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) न्यायालय सं. 4, मेरठ में लंबित था, जिसमें प्रतिवादियों ने पहले ही कह दिया था कि चूंकि गांव समेकन कार्यवाही के लिए अधिसूचित किया जा चुका है, इसलिए न्यायालय के पास अधिकारिता नहीं है। इन प्रस्तुतियों के साथ यह प्रार्थना की गई कि प्रतिवादियों का आवेदन खारिज किया जाए।

13. विचारण न्यायालय ने विवादित आदेश दिनांक 30.8.2025 द्वारा यह निष्कर्ष निकाला है कि चूंकि वादी ने यह दावा किया है कि उसकी माता सरला दुलबिश विवादित संपत्ति की बेनामी मालिक थीं, इसलिए वाद अधिनियम 1988 की धारा 4(1) द्वारा वर्जित है। विचारण न्यायालय ने वादी के इस तर्क को खारिज कर दिया है कि अधिनियम 1988 की धारा 4(3) के प्रावधान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू होते हैं, क्योंकि विवादित संपत्ति वादी

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

के धन से खरीदी गई थी और उसकी माता उसके प्रति गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध में थीं।

14. अपीलार्थी-वादी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दुर्गेश कुमार सिंह ने प्रस्तुत किया कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के आवेदन पर निर्णय लेने के चरण में, केवल वादी के कथनों और वादी के साथ प्रस्तुत दस्तावेजों की जांच की जानी है, इस स्तर पर प्रतिवादियों के लिखित कथन या उनके द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों को नहीं देखा जाना चाहिए। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि वादी के मामले की गुण-दोष के आधार पर जांच करना भी आवश्यक नहीं था और वादी ने जो भी आरोप लगाया है, उसे आवेदन पर निर्णय लेने के लिए सत्य माना जाना है। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि वादी ने स्पष्ट रूप से आरोप लगाया है कि एक हिंदू अविभाजित परिवार (एचयूएफ) था जिसमें वह और उसके पिता रामेश चंद दुलबिश शामिल थे, जो कर्ता भी थे, जो एचयूएफ की आय के खाते रखते और बनाए रखते थे। विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विवादित संपत्ति एचयूएफ की अचल संपत्ति को अवैध रूप से बेचने से प्राप्त धन और साझेदारी फर्म मेसर्स सुनील पैकेजिंग इंडस्ट्रीज की आय से वादी की माता सरला दुलबिश के नाम पर खरीदी गई थी। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि वादी और उसकी माता के बीच एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध था, इसलिए विवादित संपत्ति उसकी माता के नाम पर खरीदी गई थी, जिनके पास विवादित संपत्ति खरीदने और फिर उस पर मकान बनवाने के लिए कोई स्वतंत्र आय नहीं थी। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि विवादित संपत्ति अधिनियम 1988 की धारा 4(3) में वर्णित अपवाद के अंतर्गत आती है, इसलिए वाद अधिनियम 1988 की धारा 4(1) द्वारा वर्जित नहीं था। इन प्रस्तुतियों के

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

साथ, यह प्रार्थना की गई कि अपील स्वीकार की जाए और मूल वाद को विचारण न्यायालय की फाइल पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय लेने के निर्देश के साथ बहाल किया जाए।

15. इसके विपरीत, प्रतिवादी-प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता श्री शिवसागर सिंह ने प्रस्तुत किया कि वादी ने विवादित संपत्ति को अपनी माता सरला दुलबिश के नाम पर बेनामी होने का आरोप लगाया है, इसलिए अधिनियम 1988 की धारा 4(1) के प्रावधान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू होते हैं। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि विचारण न्यायालय ने वादी के वाद पत्र को खारिज करने में कोई त्रुटि नहीं की है। इन प्रस्तुतियों के साथ, यह प्रार्थना की गई कि अपील निराधार है और इसे प्रवेश के चरण में ही खारिज कर दिया जाए। मैंने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है, विवादित आदेश और अपील के साथ प्रस्तुत दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

16. अपील स्वीकार की जाती है।

17. सर्वोच्च न्यायालय ने विनोद इंफ्रा डेवलपर्स लिमिटेड बनाम महावीर लुनिया और अन्य 2025 आईएनएससी 772 के मामले में माना है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के आवेदन पर निर्णय लेने के प्रारंभिक चरण में, न्यायालय को अपनी जांच को वाद पत्र में किए गए कथनों तक सीमित रखना आवश्यक है और दावों के गुण-दोष या सत्यता में प्रवेश नहीं करना चाहिए। यदि अभिवचनों से कोई विवादणीय मुद्दा उत्पन्न होता है, तो वाद पत्र को संक्षिप्त रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है।

18. सर्वोच्च न्यायालय ने केशव सूद बनाम किर्ति प्रदीप सूद और अन्य 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 2459 के मामले में माना है कि जहाँ तक सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

7 के नियम 11 का दायरा है, कानून सुस्थापित है। न्यायालय केवल वाद पत्र में किए गए कथनों और अधिकतम, वाद पत्र के साथ प्रस्तुत दस्तावेजों को देख सकता है। ऐसे आवेदन पर निर्णय लेते समय प्रतिवादी का बचाव पक्ष और उसके द्वारा भरोसा किए गए दस्तावेजों को नहीं देखा जा सकता है।

19. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनोद इंफ्रा डेवलपर्स लिमिटेड (उपरोक्त) और केशव सूद (उपरोक्त) के मामलों में स्थापित उपरोक्त कानून से यह स्पष्ट है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के आवेदन पर निर्णय लेने के समय, न्यायालय को केवल वाद पत्र में किए गए कथनों और वादी द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों को देखना है। न्यायालय को प्रतिवादी के लिखित कथन या उसके द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों की जांच नहीं करनी है। इसके अलावा, न्यायालय को यह निर्धारित करने के लिए वादी के मामले की गुण-दोष के आधार पर जांच नहीं करनी है कि वह सफल होने वाला है या नहीं? यह भी स्पष्ट है कि यदि वादी की अभिवचनों से कोई विवादणीय मुद्दा उत्पन्न होता है, तो वाद पत्र को संक्षिप्त रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है।

20. विवाद को सही परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए, बेनामी लेन-देन (निषेध) अधिनियम, 1988 के प्रासंगिक प्रावधानों की जांच करना उचित होगा। अधिनियम की धारा 2(क), 2(ग), 3 और 4 निम्नानुसार हैं:

"2. परिभाषाएँ.- इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,-

(क) "बेनामी लेन-देन" से ऐसा लेन-देन अभिप्रेत है जिसमें संपत्ति एक व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दी गई या उपलब्ध कराई गई प्रतिफल के लिए अंतरित की जाती है;

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



(ग) "संपत्ति" से किसी भी प्रकार की संपत्ति अभिप्रेत है, चाहे वह जंगम हो या अचल, मूर्त हो या अमूर्त, और इसमें ऐसी संपत्ति में कोई अधिकार या हित भी शामिल है।

3. बेनामी लेन-देन का निषेध।-

(1) कोई भी व्यक्ति किसी बेनामी लेन-देन में प्रवेश नहीं करेगा।

(2) उप-धारा (1) की कोई भी बात लागू नहीं होगी- (क) किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति की खरीद पर, और यह अनुमान लगाया जाएगा, जब तक कि विपरीत सिद्ध न हो, कि कही गई संपत्ति पत्नी या अविवाहित पुत्री के लाभ के लिए खरीदी गई थी;

(ख) * * * * *

स्पष्टीकरण - * * * * *

(3) जो कोई भी किसी बेनामी लेन-देन में प्रवेश करता है, वह कारावास से दंडनीय होगा, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकती है, या जुर्माने से, या दोनों से।

(4) आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी भी बात के होते हुए भी, इस धारा के अधीन अपराध संज्ञेय नहीं होगा और जमानती होगा।

4. बेनामी रूप से धारित संपत्ति के प्रतिदावे के अधिकार का निषेध। - (1) किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार को उस व्यक्ति के विरुद्ध, जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध, लागू करने के लिए, ऐसी संपत्ति का

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से, कोई वाद, दावा या कार्यवाही नहीं की जाएगी।

(2) किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार पर आधारित कोई बचाव, चाहे वह उस व्यक्ति के विरुद्ध हो, जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध हो, किसी वाद, दावे या कार्यवाही में, ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से, अनुमत नहीं किया जाएगा।

(3) इस धारा की कोई भी बात लागू नहीं होगी,

(क) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति धारित है, वह किसी हिंदू अविभाजित परिवार में एक सहदायिक है और संपत्ति परिवार में सहदायिकों के लाभ के लिए धारित है; या

(ख) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति धारित है, वह एक न्यासी है या कोई अन्य व्यक्ति है जो एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में है, और संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए धारित है, जिसके लिए वह न्यासी है या जिसके प्रति वह ऐसी हैसियत में है।"

21. सर्वोच्च न्यायालय ने पुष्पलता बनाम विजय कुमार (मृत) उनके उत्तराधिकारियों के माध्यम से और अन्य 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1152 के मामले में, उन परिस्थितियों पर चर्चा करते हुए, जिन्हें लेन-देन की प्रकृति निर्धारित करने के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में लिया जा सकता है, निम्नानुसार माना:

"22. न्यायालय का दृष्टिकोण, उन मामलों में जहां दावा है कि एक संपत्ति या संपत्तियों का समूह, बेनामी है, को पिछले निर्णयों पर विचार करने के बाद, बिनापनी पॉल बनाम प्रतिमा

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

घोष (2007) 6 एससीसी 100 में उल्लिखित किया गया था, जहां इस न्यायालय ने वल्लियाम्मल बनाम सुब्रमण्यम (2004) 7 एससीसी 233 से उद्धरणों को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया:

47. लेन-देन की बेनामी प्रकृति के संबंध में साबित करने का भार भी प्रतिवादी पर था। इस पहलू पर इस न्यायालय ने वल्लियाम्मल (मृत्यु के बाद) उनके उत्तराधिकारियों द्वारा बनाम सुब्रमण्यम (उपरोक्त) में विचार किया है, जिसमें एक खंडपीठ ने माना:

"13. इस न्यायालय ने कई निर्णयों में माना है कि यह सुस्थापित है कि किसी विशेष विक्रय को बेनामी साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो लेन-देन को बेनामी होने का आरोप लगाता है। बेनामी लेन-देन का सार पक्षकारों का आशय है और अक्सर, ऐसा आशय एक मोटे पर्दे में ढका होता है जिसे आसानी से भेदा नहीं जा सकता है। लेकिन इस तरह की कठिनाइयाँ उस व्यक्ति को, जो लेन-देन को बेनामी होने का दावा कर रहा है, उस गंभीर भार के किसी भी हिस्से से राहत नहीं देती हैं, जो उस पर है, न ही साक्ष्य के विकल्प के रूप में मात्र अनुमानों या अटकलों को स्वीकार करने का औचित्य साबित करती हैं। देखें जयदयाल पोद्दार बनाम बीबी हजरा [(1974) 1 एससीसी 3], कृष्णानंद अग्निहोत्री बनाम मध्य प्रदेश राज्य [(1977) 1 एससीसी 816 : 1977 एससीसी (क्रि) 190], ठाकुर भीम सिंह बनाम ठाकुर कान सिंह [(1980) 3 एससीसी 72], प्रताप सिंह बनाम सरोजिनी देवी [1994 सप्ल (1) एससीसी 734] और ब्रजलाल जे. गणात्रा के उत्तराधिकारी बनाम पार्श्वोत्तम एस. शाह के उत्तराधिकारी [(1996) 4 एससीसी 490]। ऊपर संदर्भित निर्णयों में यह माना गया है कि क्या कोई विशेष विक्रय बेनामी है या नहीं, यह काफी हद तक तथ्य का प्रश्न है, और प्रश्न का निर्धारण करने के लिए कोई पूर्ण सूत्र या अम्लीय परीक्षण, जो सभी स्थितियों में समान रूप

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

से लागू हो, निर्धारित नहीं किया जा सकता है। ऐसा कहने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नलिखित छह परिस्थितियों को स्पष्ट किया, जिन्हें लेन-देन की प्रकृति निर्धारित करने के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में लिया जा सकता है:

- (1) वह स्रोत जिससे क्रय धन आया;
- (2) क्रय के बाद संपत्ति की प्रकृति और कब्जा;
- (3) मकसद, यदि कोई हो, लेन-देन को बेनामी रंग देने के लिए;
- (4) पक्षकारों की स्थिति और संबंध, यदि कोई हो, दावेदार और कथित बेनामीधारक के बीच;
- (5) विक्रय के बाद शीर्षक विलेखों की अभिरक्षा; और
- (6) विक्रय के बाद संपत्ति के साथ व्यवहार करने में संबंधित पक्षकारों का आचरण। (जयदयाल पोद्दार बनाम बीबी हजरा [(1974) 1 एससीसी 3], एससीसी पृष्ठ 7, पैरा 6)

14. उपरोक्त संकेतक संपूर्ण नहीं हैं और प्रत्येक मामले के तथ्यों के अनुसार उनकी प्रभावोत्पादकता भिन्न होती है। फिर भी, वह स्रोत जहां से क्रय धन आया और मकसद कि संपत्ति बेनामी क्यों खरीदी गई, यह निर्धारित करने के लिए अब तक के सबसे महत्वपूर्ण परीक्षण हैं कि क्या किसी व्यक्ति के नाम पर खड़ा विक्रय, वास्तव में किसी अन्य के लाभ के लिए है। हम वर्तमान लेन-देन की जांच उपरोक्त दो संकेतकों पर करेंगे।

* * * * *

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

18. यह सुस्थापित है कि पक्षकारों का आशय बेनामी लेन-देन का सार है और बेनामी के सिद्धांत को लागू करने वाले पक्ष द्वारा धन प्रदान किया जाना चाहिए। साक्ष्य स्पष्ट रूप से दिखाता है कि मूल वादी के पास रामायी अम्मल के नाम पर संपत्ति खरीदने का कोई औचित्य नहीं था। उनके द्वारा दिया गया कारण बिल्कुल स्वीकार्य नहीं है। धन का स्रोत वादी से बिल्कुल भी पता नहीं लगाया जा सकता है। वाद पत्र में नामित किसी भी व्यक्ति या किसी अन्य को गवाह के रूप में परीक्षित नहीं किया गया। वादी द्वारा प्रासंगिक गवाहों की परीक्षा न करना उसके मामले को पूरी तरह से नष्ट कर देता है।"

23. कानून के एक मामले के रूप में, यह सिद्धांत कि जो यह आरोप लगाता है कि कोई संपत्ति बेनामी है और नाममात्र रूप से वास्तविक मालिक की ओर से धारित है - उन मामलों में जो धारा 4(3) के तहत अपवाद बनाते हैं - उसे उस तथ्य को साबित करने के प्रारंभिक भार को विस्थापित करना होगा। ऐसा साक्ष्य के माध्यम से, या परिस्थितियों के माध्यम से कुल मिलाकर किया जा सकता है। इस तथ्य को इस न्यायालय ने मार्सेल मार्टिस बनाम एम. प्रिंटर (2012) 5 एससीसी 342 में स्पष्ट किया था। उस मामले में, मुद्दा यह था कि क्या वसीयत के अभाव में, उस व्यक्ति (संपत्ति में किरायेदार के रूप में हित रखने वाले) द्वारा भाई-बहनों में से एक के पक्ष में अधिकारों का हस्तांतरण, उसकी मृत्यु के बाद, अन्य उत्तराधिकारियों को बाहर करने के लिए संचालित हुआ। न्यायालय ने माना कि हस्तांतरण एक नगरपालिका की आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया गया था, और संपत्ति, जिसके नाम पर यह हस्तांतरित हुई थी, अधिनियम की धारा 4(3)(क) के तहत, भाई-बहनों की ओर से एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडुशियरी) हैसियत में धारित की गई थी:

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

"22. यह स्पष्ट है कि जबकि "गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत" अभिव्यक्ति एक सटीक परिभाषा के योग्य नहीं हो सकती है, यह एक ऐसे संबंध का संकेत देती है जो एक न्यासी और ट्रस्ट के लाभार्थियों के बीच संबंध के अनुरूप है। यह अभिव्यक्ति वास्तव में अपने आयात में व्यापक है क्योंकि यह उन सभी स्थितियों तक फैली हुई है जो पक्षकारों को ऐसी स्थिति में रखती हैं जो एक ओर विश्वास और भरोसे पर और दूसरी ओर सद्भावना पर आधारित होती हैं।

23. यह निर्धारित करने में कि क्या कोई संबंध विश्वास या भरोसे पर आधारित है, जो यह निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक है कि क्या वे गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में हैं, न्यायालय को उस तथ्यात्मक संदर्भ को ध्यान में रखना होगा जिसमें प्रश्न उठता है क्योंकि यह केवल तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में ही है कि किसी दिए गए मामले में एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध के अस्तित्व या अन्यथा का अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसा कहने के बाद, आइए हम यह निर्धारित करने के लिए कि क्या अपीलार्थी वादी-प्रतिवादियों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में था, वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर एक बार फिर मुड़ते हैं।

24. हाथ में प्रश्न से संबंधित पहली और सबसे महत्वपूर्ण परिस्थिति यह तथ्य है कि प्रश्नगत संपत्ति श्रीमती स्टेला मार्टिस - हमारे समक्ष पक्षों की माता - द्वारा किराए पर ली गई थी। यह सामान्य आधार है कि उनकी मृत्यु के समय उन्होंने कोई वसीयत नहीं छोड़ी थी और न ही कोई अन्य सामग्री है जो यह सुझाव देती हो कि उनका इरादा था कि वाद संपत्ति में उनके पास किरायेदारी का अधिकार उनके पति, सी.एफ. मार्टिस या उनकी बेटियों, इस अपील में प्रतिवादियों, या दोनों को छोड़कर, अपीलार्थी को हस्तांतरित किया जाना चाहिए। सामान्य

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



पाठ्यक्रम में, किरायेदार की मृत्यु पर, किरायेदारी के अधिकार स्वाभाविक रूप से उसके कानूनी उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होने चाहिए थे, जिनमें मृतक के पति और उसके बच्चे (इस अपील के पक्षकार) शामिल होंगे। फिर भी, संपत्ति को अपीलार्थी के नाम पर हस्तांतरित करने का कारण यह तथ्य था कि निगम इस तरह के हस्तांतरण को कई व्यक्तियों के बजाय एक व्यक्ति के नाम पर करना चाहता था, जो किरायेदारी अधिकारों के उत्तराधिकारी हो सकते थे। इस आशय का एक विशिष्ट कथन वादी-प्रतिवादियों द्वारा वाद पत्र के पैरा 7 में किया गया था, जिसका अपीलार्थी द्वारा दायर लिखित कथन में खंडन नहीं किया गया था। इसलिए, यह मानना उचित है कि अपीलार्थी के पक्ष में अधिकारों का हस्तांतरण इसलिए नहीं था कि दूसरों ने अपने अधिकारों को छोड़ दिया था, बल्कि इसलिए क्योंकि निगम को संपत्ति में अधिकारों और कर्तव्यों को बाद के चरण में लागू करने में प्रक्रियात्मक जटिलताओं से बचने के लिए संभवतः एक व्यक्ति के पक्ष में हस्तांतरण की आवश्यकता थी। यह उस कसौटी पर भी मानना उचित है कि मृतक-किरायेदार के अन्य कानूनी प्रतिनिधियों ने न तो संपत्ति में अपने किरायेदारी अधिकारों को छोड़ा और न ही उन लाभों को छोड़ा जो निगम के कब्जाधारियों को संपत्ति बेचने के निर्णय के परिणामस्वरूप मृतक किरायेदार के कानूनी उत्तराधिकारियों के रूप में उन्हें प्राप्त होते। यह निष्कर्ष इस तथ्य से मजबूत होता है कि पक्षकारों ने वाद संपत्ति के अधिग्रहण के लिए भुगतान किए गए विक्रय प्रतिफल में योगदान दिया था, जो उन्होंने नहीं किया होता यदि इरादा अपीलार्थी के पक्ष में संपत्ति को स्वीकार करने का होता। उपरोक्त के अलावा यह तथ्य है कि पक्षकार आपस में घनिष्ठ रूप से संबंधित थे, जो भी के मामले में काफी समर्थन प्रदान करता है वादियों का यह मामला कि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने अपने भाई-बहनों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में किरायेदारी अधिकार और वाद

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

संपत्ति के प्रत्यक्ष शीर्षक को धारित किया था, जिन्होंने अपने योगदान और अपने पिता द्वारा किए गए योगदान के कारण, संपत्ति और उसके स्वामित्व में रुचि दिखाना जारी रखा। अपीलार्थी में विश्वास और भरोसा रखना मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में असामान्य या अप्राकृतिक नहीं था, खासकर जब वाद संपत्ति पर कब्जा वादियों द्वारा जारी रखा गया था, जो कानून में और तर्क की समानता पर, अपीलार्थी के लाभ के लिए भी उसी को धारित करने वाले माने जाएंगे, जितना कि अपीलार्थी वादियों के लाभ के लिए संपत्ति का शीर्षक धारित कर रहा था।

25. उपरोक्त परिस्थितियों का संचयी प्रभाव, जब पक्षों के पिता स्वर्गीय श्री सी.एफ. मार्टिस द्वारा भुगतान की गई पर्याप्त राशि के आलोक में देखा जाता है, तो अपीलार्थी को उक्त चार व्यक्तियों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में रखता है। ऐसा होने पर, धारा 4 की उपधारा (3)(ख) के अंतर्गत आने के कारण लेन-देन पूरी तरह से अधिनियम की धारा 4 के दुष्प्रभाव से बच जाता है। इसलिए, प्रतिवादियों द्वारा दायर वाद अधिनियम द्वारा वर्जित नहीं था, जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिया गया था।

* * * * *

27. इन कारकों के आलोक में, और इस न्यायालय द्वारा घोषित कानून, जिसने उन परिस्थितियों को विस्तृत किया है जिनके तहत अधिनियम की धारा 4(3)(क) के तहत एक बेनामी मालिक के खिलाफ एक दावा साबित किया जा सकता है, विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष, रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए,

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण हैं। इस न्यायालय की राय में, उच्च न्यायालय ने कानून की सही स्थिति पर ध्यान नहीं देने में त्रुटि की है।

* * * * *

30. इस न्यायालय की राय में, उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को अनदेखा करने में त्रुटि की है कि इस मामले की परिस्थितियाँ, जहाँ पहले वादी ने साबित कर दिया था कि संपत्तियाँ उसके धन से खरीदी गई थीं, और पुत्र नाबालिग थे, जिनकी आय का कोई स्रोत नहीं था। दूसरे प्रतिवादी की स्थिति - सभी कार्यवाहियों के दौरान - यह थी कि संपत्तियाँ पहले वादी की थीं; दूसरे शब्दों में, उसने वाद के कथनों को स्वीकार किया। वादी ने उन किरायेदारों के सकारात्मक साक्ष्य देकर यह भी साबित किया कि उसके पास संपत्ति का कब्जा था, जिन्होंने उसे किराया दिया। इन परिस्थितियों में, बिनापनी पॉल और वल्लियाम्मल (उपरोक्त) के निर्णयों के संदर्भ में, अधिनियम की धारा 4(3)(क) के अर्थ के भीतर बेनामी स्वामित्व स्थापित करने के लिए आवश्यक तत्व, पहले

22. सर्वोच्च न्यायालय ने मार्सेल मार्टिस बनाम एम.प्रिंटर और अन्य (2012)5 एससीसी 342 के मामले में, बेनामी लेन-देन (निषेध) अधिनियम, 1988 की धारा 4 पर चर्चा करते हुए निम्नानुसार माना:

"26. अधिनियम की धारा 4, जिस पर श्री चौधरी ने बहुत जोर दिया था, को विस्तार से उद्धृत किया जा सकता है:

"4. बेनामी रूप से धारित संपत्ति के प्रतिदावे के अधिकार का निषेध। (1) किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार को उस व्यक्ति के विरुद्ध, जिसके नाम पर संपत्ति

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध, लागू करने के लिए, ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से, कोई वाद, दावा या कार्यवाही नहीं की जाएगी।

(2) किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार पर आधारित कोई बचाव, चाहे वह उस व्यक्ति के विरुद्ध हो, जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध हो, किसी वाद, दावे या कार्यवाही में, ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से, अनुमत नहीं किया जाएगा।

(3) इस धारा की कोई भी बात लागू नहीं होगी

(क) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति धारित है, वह किसी हिंदू अविभाजित परिवार में एक सहदायिक है और संपत्ति परिवार में सहदायिकों के लाभ के लिए धारित है; या

(ख) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति धारित है, वह एक न्यासी है या कोई अन्य व्यक्ति है जो एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशिअरी) हैसियत में है, और संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए धारित है, जिसके लिए वह न्यासी है या जिसके प्रति वह ऐसी हैसियत में है।"

उपरोक्त का एक सरल पाठ यह दिखाएगा कि किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार को लागू करने के लिए उस व्यक्ति के विरुद्ध, जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध, ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति के कहने पर, कोई वाद, दावा या कार्यवाही नहीं की जाएगी।

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

27. यह सामान्य आधार है कि हालांकि जिस विक्रय विलेख द्वारा संपत्ति अपीलार्थी के नाम पर हस्तांतरित की गई थी, वह उपरोक्त कानून के अधिनियमित होने से पहले निष्पादित किया गया था, फिर भी जिस वाद से यह अपील उत्पन्न हुई है, वह वर्ष 1988 के बाद दायर किया गया था। इसलिए, धारा 4 में निहित निषेध, उसमें निर्दिष्ट अन्य शर्तों की संतुष्टि के अधीन, ऐसे वाद पर लागू होगा। दूसरे शब्दों में, जब तक कि धाराओं 4(1) और (2) में निहित शर्तों को उसकी उपधारा (3) में निहित किसी भी बात के कारण अनुपयोज्य नहीं माना जाता है, तब तक वादी-प्रतिवादियों द्वारा दायर वाद धारा 4 के दुष्प्रभाव के अंतर्गत आएगा।

28. फिर महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या धारा 4 की उपधारा (3) उस जैसे लेन-देन को बचाती है, जिसके साथ हम

29. ऊपर उद्धृत धारा 4 की उपधारा (3) दो अलग-अलग भागों में है। पहला भाग धारा 4(3) के खंड (क) से संबंधित है, जो एक हिंदू अविभाजित परिवार में एक सहदायिक द्वारा और उसके नाम पर, परिवार में ऐसे सहदायिकों के लाभ के लिए अधिग्रहणों से संबंधित है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि उक्त प्रावधान तत्काल मामले में लागू नहीं होता है और न ही प्रतिवादी-वादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उस पर कोई भरोसा किया गया था।

30. प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री नवीन आर. नाथ द्वारा जिस प्रावधान को लागू किया गया था, वह अधिनियम की धारा 4(3)(ख) था, जो भी दो भागों में है - एक जो न्यासियों और उनके लाभार्थियों से संबंधित है और दूसरा जो उन व्यक्तियों से संबंधित है जो एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में हैं और जिनके प्रति वह ऐसी हैसियत में है। श्री नाथ ने तर्क दिया कि जिन परिस्थितियों में प्रश्नगत खरीदारी अपीलार्थी के

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

नाम पर की गई थी, वह यह निर्धारित करने में बहुत महत्व रखती है कि क्या अपीलार्थी, जिसके नाम पर संपत्ति अधिग्रहित की गई थी, प्रतिवादी-वादियों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में था।

* * * * *

37. हम इस स्तर पर इस न्यायालय के हालिया निर्णय सीबीएसई बनाम आदित्य बंद्योपाध्याय [2011] 8 एससीसी 497] का संदर्भ ले सकते हैं, जिसमें उस मामले में न्यायालय की ओर से बोलते हुए, रवींद्रन, जे. ने "गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी)" और "गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध" शब्दों को निम्नलिखित शब्दों में समझाया: (एससीसी पृष्ठ 524-25, पैरा 39) "39. 'गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी)' शब्द एक ऐसे व्यक्ति को संदर्भित करता है जिसका किसी अन्य के लाभ के लिए कार्य करने का कर्तव्य है, जो सद्भावना और स्पष्टवादिता दिखाता है, जहां ऐसा अन्य व्यक्ति उस व्यक्ति पर या कर्तव्य का निर्वहन करने वाले पर विश्वास और विशेष भरोसा रखता है। 'गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध' शब्द का उपयोग उस स्थिति या लेन-देन का वर्णन करने के लिए किया जाता है जहां एक व्यक्ति (लाभार्थी) अपने मामलों, व्यवसाय या लेन-देन के संबंध में दूसरे व्यक्ति (गोपनीय/विश्वासपात्र) में पूर्ण विश्वास रखता है। यह शब्द उस व्यक्ति को भी संदर्भित करता है जो किसी अन्य (लाभार्थी) के लिए ट्रस्ट में कोई वस्तु रखता है। गोपनीय/विश्वासपात्र से अपेक्षा की जाती है कि वह विश्वास के साथ और लाभार्थी के लाभ और फायदे के लिए कार्य करे, और लाभार्थी या लाभार्थी से संबंधित वस्तुओं के साथ व्यवहार करने में सद्भावना और निष्पक्षता का उपयोग करे। यदि लाभार्थी ने गोपनीय/विश्वासपात्र को कोई वस्तु सौंपी है, ताकि वह उस वस्तु को ट्रस्ट में रखे या उस सौंपी गई वस्तु के संबंध में या उसके संदर्भ में

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



कुछ कार्य करे, तो गोपनीय/विश्वासपात्र को विश्वास के साथ कार्य करना होगा और उससे अपेक्षा की जाती है कि वह उस वस्तु या जानकारी को किसी तीसरे पक्ष को प्रकट नहीं करेगा।"

यह स्पष्ट है कि जबकि "गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत" अभिव्यक्ति एक सटीक परिभाषा के योग्य नहीं हो सकती है, यह एक ऐसे संबंध का संकेत देती है जो एक

38. यह निर्धारित करने में कि क्या कोई संबंध विश्वास या भरोसे पर आधारित है, जो यह निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक है कि क्या वे एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में हैं, न्यायालय को उस तथ्यात्मक संदर्भ को ध्यान में रखना होगा जिसमें प्रश्न उठता है क्योंकि यह केवल तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में ही है कि किसी दिए गए मामले में एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध के अस्तित्व या अन्यथा का अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसा कहने के बाद, आइए हम यह निर्धारित करने के लिए कि क्या अपीलार्थी वादी-प्रतिवादियों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में था, वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर एक बार फिर मुड़ते हैं।

* * * * *

44. उपरोक्त परिस्थितियों का संचयी प्रभाव, जब पक्षों के पिता स्वर्गीय श्री सी.एफ. मार्टिस द्वारा भुगतान की गई पर्याप्त राशि के आलोक में देखा जाता है, तो अपीलार्थी को उक्त चार व्यक्तियों के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में रखता है। ऐसा होने पर, धारा 4 की उपधारा (3)(ख) के अंतर्गत आने के कारण लेन-देन पूरी तरह से अधिनियम की धारा 4 के दुष्प्रभाव से बच जाता है। इसलिए, प्रतिवादियों द्वारा दायर वाद अधिनियम द्वारा

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

वर्जित नहीं था, जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा उस आशय पर लिया गया दृष्टिकोण, हालांकि थोड़े भिन्न कारणों से, पुष्टि की जाती है।

23. सर्वोच्च न्यायालय ने शैफाली गुप्ता बनाम विद्या देवी गुप्ता और अन्य 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 1181 के मामले में निम्नानुसार माना:

"23. बेनामी अधिनियम की धारा 4, उस व्यक्ति के कहने पर, जो स्वयं को संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करता है, बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में वाद, दावे या कार्यवाही को वर्जित करती है। यह इस प्रकार है:

"4(1). किसी बेनामी रूप से धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार को उस व्यक्ति के विरुद्ध, जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध, लागू करने के लिए, ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से, कोई वाद, दावा या कार्यवाही नहीं की जाएगी।"

24. उपरोक्त प्रावधान 'बेनामी रूप से धारित संपत्ति' के संबंध में एक कार्यवाही को वर्जित करता है। हालाँकि, जिस संपत्ति के संबंध में वाद, दावा या कार्यवाही लाई गई है, वह बेनामी संपत्ति है या नहीं, यह मुख्य विचार का मुद्दा है।

25. वाद पत्र के कथन हर समय वाद संपत्तियों को संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्तियों के रूप में वर्णित करते हैं और यह कि वे या तो संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति के मूल से या संयुक्त परिवार के व्यवसाय से प्राप्त आय से खरीदी गई हैं। संपत्तियों को परिवार के किसी सदस्य के नाम पर बेनामी के रूप में वर्णित नहीं किया गया है। इसलिए, वाद पत्र को पढ़ने से, वाद

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

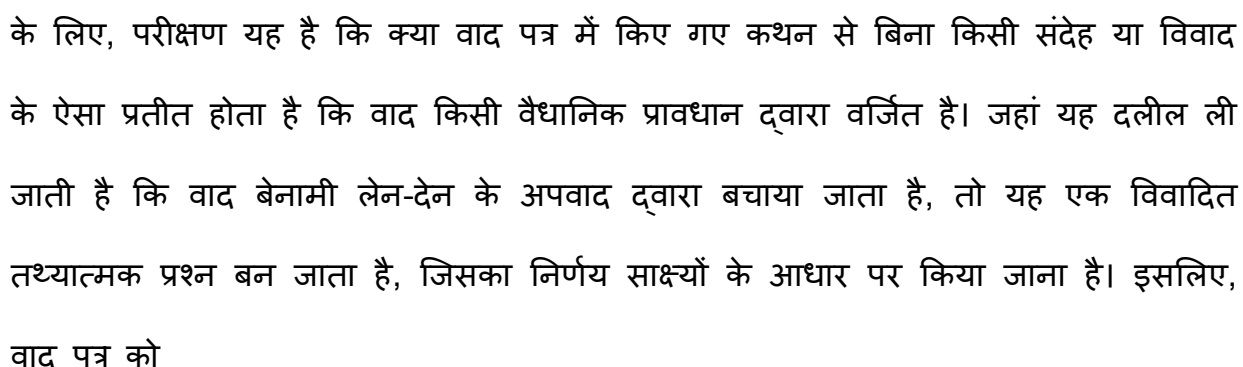
संपत्तियों को प्रथम दृष्टया बेनामी संपत्तियाँ नहीं माना जा सकता है, जिनके संबंध में बेनामी अधिनियम की धारा 4 के आलोक में वाद सुसंगत नहीं हो सकता है।

26. बेनामी अधिनियम उक्त अधिनियम की धाराओं 2(8) और 2(9) के तहत 'बेनामी संपत्ति' और 'बेनामी लेन-देन' को परिभाषित करता है। बेनामी संपत्ति वह संपत्ति है जो बेनामी लेन-देन का विषय है जबकि बेनामी लेन-देन एक ऐसे व्यक्ति द्वारा धारित संपत्ति है जिसके संबंध में प्रतिफल किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रदान किया गया है लेकिन इसमें संपत्तियों की कुछ श्रेणियाँ शामिल नहीं होंगी, जैसे कि जहाँ कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में संपत्ति धारित कर रहा है।

27. ऐसी परिस्थितियों में, क्या कोई संपत्ति बेनामी है, इस पर न केवल बेनामी अधिनियम की धारा 4 के आलोक में बल्कि उक्त अधिनियम की धाराओं 2(8) और 2(9) के संबंध में भी विचार किया जाना चाहिए, अर्थात् क्या संपत्ति यदि बेनामी है तो वह अपवाद में आती है। यह केवल तभी है जब संपत्ति बेनामी है और धारा 2 की उपधारा (9) में निहित अपवाद के अंतर्गत नहीं आती है, तभी कहा जा सकता है कि वाद वर्जित है। हालाँकि, यह मुद्दा कि क्या संपत्ति बेनामी है और क्या यह अपवाद द्वारा कवर नहीं है, फिर से एक मुद्दा है जिसका निर्णय साक्ष्यों के आधार पर किया जाना है, न कि केवल वाद पत्र में निहित मात्र कथनों पर। प्रतिवादियों को संपत्ति को बेनामी साबित करने के लिए साक्ष्य पेश करने होंगे।

28. पवन कुमार बनाम बाबू लाल (2019) 4 एससीसी 367 में, एक समान मुद्दा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 (डी) के तहत वाद पत्र को खारिज करने से संबंधित मामले में इस न्यायालय के समक्ष उठा। इस न्यायालय ने माना कि वाद पत्र को खारिज करने

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



29. उपरोक्त मामले का निर्णय हाथ में मामले के तथ्यों पर पूरी तरह से लागू होता है। तदनुसार, हमारी राय में, निचली अदालतों ने उपरोक्त आधार पर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के तहत आवेदन को खारिज करने में कानून की कोई त्रुटि नहीं की है।"

24. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त मामलों में, बेनामी लेन-देन (निषेध) अधिनियम, 1988, वर्ष 2016 में इसके संशोधन से पहले और इसके बाद, स्थापित किए गए उपरोक्त कानून से, यह स्पष्ट है कि जहां यह आरोप लगाया जाता है कि वाद संपत्तियां संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्तियां हैं और उन्हें या तो संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति के मूल से या संयुक्त परिवार के व्यवसाय से प्राप्त आय से खरीदा गया है और वाद में मांगी गई राहत पूरी तरह से उक्त संपत्ति के संबंध में है, तो ऐसा वाद बेनामी अधिनियम द्वारा वर्जित नहीं होता है। यह स्पष्ट है कि एक व्यक्ति अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति, चाहे वह जंगम हो या अचल, खरीद सकता है और यह अनुमान लगाया जाएगा, जब तक कि विपरीत सिद्ध न हो, कि कहीं गई संपत्ति पत्नी या अविवाहित पुत्री के लाभ के लिए खरीदी गई थी। यह भी स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 4(1) द्वारा अधिरोपित निषेध, तब लागू नहीं होता है जब संपत्ति किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा धारित की जाती है जो हिंदू अविभाजित परिवार में एक सहदायिक है और संपत्ति परिवार में सहदायिक के लाभ के लिए धारित है। यह तब भी लागू नहीं होता है

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

जब जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति धारित है, वह एक न्यासी है या उस व्यक्ति के लाभ के लिए एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में है, जिसके प्रति वह ऐसी हैसियत में है।

25. यह भी स्पष्ट है कि पति, यह आरोप लगाते हुए कि उसकी पत्नी केवल बेनामी मालिक है, स्वयं को संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करते हुए वाद दायर कर सकता है। पति साक्ष्य प्रस्तुत करके या परिस्थितियों के माध्यम से कुल मिलाकर उपरोक्त तथ्य को साबित कर सकता है। यह भी स्पष्ट है कि संपत्ति को बेनामी साबित करने का भार पति पर है। निस्संदेह, पत्नी यह साबित करके उपरोक्त अनुमान का खंडन कर सकती है कि कथित संपत्ति बेनामी नहीं थी और उसने इसे अपने स्वयं के धन से खरीदा था।

26. यह भी स्पष्ट है कि क्या मामला अधिनियम 1988 की धारा 4(3) के तहत अपवाद के दायरे में आता है या नहीं, यह एक पहलू है जिसकी जांच रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों के आधार पर की जानी है। केवल वाद पत्र के कथनों के आधार पर, यह निर्णय नहीं किया जा सकता है कि वादी का वाद अधिनियम की धारा 4(1) के तहत वर्जित है।

27. सर्वोच्च न्यायालय ने पवन कुमार बनाम बाबूलाल (मृत) उनके उत्तराधिकारियों के माध्यम से (2019) 4 एससीसी 367 के मामले में माना है कि बेनामी लेन-देन के अपवाद के रूप में मामले की बचत करने वाली दलील, एक विवादित तथ्यात्मक प्रश्न है, जिसका निर्णय साक्ष्यों के आधार पर किया जाना है और वाद पत्र को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के तहत खारिज नहीं किया जा सकता है।

28. वाद पत्र के कथनों से यह स्पष्ट है कि विवादित संपत्ति वादी के दादा शांति सरन दुलबिश की थी, जिनकी मृत्यु वर्ष 1953 में हुई, जिसके बाद शांति सरन दुलबिश के कानूनी

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

उत्तराधिकारियों के बीच एक पारिवारिक बंटवारा हुआ, जिसमें संपत्ति वादी के पिता रामेश चंद दुलबिश को हस्तांतरित हुई, जिनके साथ वादी का एक एचयूएफ था। वाद पत्र में आरोप लगाया गया था कि विवादित संपत्ति वर्ष 1989 और 1990 में वादी और उसके स्वर्गीय पिता रामेश चंद दुलबिश के हिंदू अविभाजित परिवार (एचयूएफ) की अचल संपत्ति को बेचने से प्राप्त प्रतिफल से खरीदी गई थी, जब वादी के पिता जीवित थे, जिनकी बाद में वाद के लंबित रहने के दौरान 2.11.2006 को मृत्यु हो गई। यह वादी द्वारा यह भी आरोप लगाया गया था कि उसका अपने पिता के साथ मेसर्स सुनील पैकेजिंग इंडस्ट्रीज के नाम और शैली में एक साझेदारी फर्म भी थी, जिसमें उसके पिता एक निष्क्रिय साझेदार थे, और इस फर्म की आय और एक बैंक से प्राप्त कैश क्रेडिट सीमा से, विवादित भूमि पर मकान बनवाया गया था, जो विवादित संपत्ति सं. 342/1, हरनामदास रोड, सिविल लाइंस, मेरठ है।

29. यह सत्य है कि वादी की माता कथित एचयूएफ में एक सहदायिक नहीं थीं, लेकिन निश्चित रूप से, वादी और उसकी माता सरला दुलबिश के बीच एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) संबंध था, जो अधिनियम 1988 की धारा 4(3)(ख) में वर्णित अपवाद के अंतर्गत आता है। विवादित संपत्ति वादी की माता सरला दुलबिश के नाम पर इसलिए खरीदी जा सकती थी क्योंकि वह वादी के प्रति एक गोपनीय/विश्वासपात्र (फिडूशियरी) हैसियत में थीं, जो वादी के पिता रामेश चंद दुलबिश की पत्नी भी थीं। यहाँ तक कि वादी के पिता भी अपनी पत्नी के नाम पर संपत्ति खरीद सकते थे। उपरोक्त दोनों स्थितियों में, अधिनियम 1988 की धारा 4(1) का निषेध लागू नहीं होता है। यदि वादी यह साबित करने में सफल होता है कि उसकी माता के पास विवादित भूमि या संपत्ति को खरीदने के लिए, और उस पर मकान बनवाने के लिए, वित्तीय क्षमता नहीं थी, और धन वादी द्वारा उसकी फर्म की आय से प्रदान किया गया था या

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”

एचयूएफ की अचल संपत्ति को बेचकर प्राप्त किया गया था, तो निश्चित रूप से, वादी का वाद अधिनियम 1988 की धारा 4(1) के तहत वर्जित नहीं था। धारा 4(1) का निषेध केवल तभी लागू होता है जब विवादित संपत्ति अधिनियम 1988 की धारा 4(3) में वर्णित अपवादों के अंतर्गत नहीं आती है। यह भी सुस्थापित है कि विवादित संपत्ति बेनामी है या नहीं, यह एक विवादित तथ्यात्मक प्रश्न है, जिसका निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के चरण में नहीं किया जा सकता है।

30. उपरोक्त चर्चा से, यह स्पष्ट है कि विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11(डी) के तहत प्रतिवादियों के आवेदन को स्वीकार करने में सामग्री अवैधता की है। विवादित आदेश विकृत है और रद्द किए जाने योग्य है। परिणामस्वरूप, अपील सारगर्भित है और स्वीकार किए जाने योग्य है।

31. तदनुसार, यह अपील इसके द्वारा स्वीकार की जाती है। विचारण न्यायालय का वाद सं. 782 ऑफ 2006 में विवादित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 30.8.2025 रद्द किया जाता है। प्रतिवादियों का सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के तहत आवेदन 89-सी खारिज किया जाता है। वाद सं. 782 ऑफ 2006 को उसके मूल संख्या पर बहाल किया जाता है।

32. विचारण न्यायालय को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्ति की तारीख से छह महीने के भीतर, किसी भी पक्ष को अनावश्यक स्थगन दिए बिना, वाद का निर्णय करे।

33. यह आगे स्पष्ट किया जाता है कि विचारण न्यायालय इस न्यायालय द्वारा इस आदेश में की गई टिप्पणियों से बाध्य नहीं है और वह पक्षों की अभिवचनों और विचारण के दौरान

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



उनके द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर, कानून के अनुसार, अपनी राय बनाने के लिए स्वतंत्र है।

34. हालाँकि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, पक्षकार अपना-अपना खर्च वहन करेंगे। कार्यालय को निर्देश दिया जाता है कि वह तदनुसार डिक्री तैयार करे।

आदेश दिनांक:- 10.02.2026

जितेंद्र/हिमांशु/मयंक

(माननीय न्यायमूर्ति संदीप जैन)

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”